ललित निबन्ध परम्परा में कुबेर नाथ राय का अवदान

*** डॉ. कृष्ण बीर सिंह**

निबन्ध संस्कृत की मूल धातु 'बंध' में उपसर्ग 'नि' जोड़ देने के पश्चात् बना है। संस्कृत के विभिन्न विद्वानों ने निबन्ध को विभिन्न अर्थ में प्रयुक्त किया है। जैसे-वाचस्पति ने 'नि+बन्ध +धञ्' का अर्थ-संग्रह करना, बाँधना या रोकने से लगाया है। जबकि जटाधर ने निबन्ध की निम्न सधि विच्छेद की है-'नि+बंध+अच्' अर्थात् 'नीम का वृक्ष जिसका सेवन करने से कुष्ठ रोग भी ठीक हो जाता है।' विकास के साथ-साथ निबन्ध के भाव व अर्थ में व्यापक परिवर्तन आया है।

निबन्ध शब्द की आवृत्ति 'श्रीमद्भागवदगीता' (श्लोक 5, अध्याय 16) में हुई है। यहाँ आसुरी शक्ति को बाँधने के संदर्भ में इस शब्द क ा प्रयोग हुआ है। इसी भाँति सातवीं शताब्दी में रचित 'वासवदत्ता, शिशुपालवधम्' एवं आठवीं सदी में लिखित ग्रन्थ 'न्यायमंजरी' एवं 'तत्त्वदीपन' के अलावा 'न्याय वार्तिक' एवं 'वेदान्त कल्पतरु' आदि ग्रन्थों में भी निबन्ध का विभिन्न सन्दर्भों में उल्लेख प्राप्त होता है।

निबन्ध-अर्थ एवं प्रयोग-जहाँ तक निबन्ध शब्द के अथ का सम्बन्ध है संस्कृत में विषय विशेष का प्रतिपादन करने वाले ग्रन्थ को 'निबन्ध' कहते थे। बाद में महत्त्वपूर्ण रचना मात्र को भी निबन्ध कहा जाने लगा इसका कारण यह है कि किसी भी शब्द को मुख्यत: दो सन्दर्भों में प्रयुक्त किया जाता है, एक शाब्दिक, दूसरा-व्यवहृत। इस अर्थ का उल्लेख गोस्वामी तुलसीदास ने किया है। उन्होंने 'रामचरित मानस' को 'भाषा निबंधम्' के नाम से सम्बोधित किया है। यहाँ कुछ पाश्चात्य एवं भारतीय विद्वानों की परिभाषाओं का विवेचन करना अपेक्षित है-

जॉनसन के अनुसार निबन्ध 'लूज सैली ऑफ मांइड' अर्थात चिन्तनहीन बुद्धि, आन्नद एवं मन का आकस्मिक भटकाव मात्र है। जबकि 'क्रेवेल' ने निबन्ध को लेखन कला का प्रिय साधन माना है। इसमें ज्ञान, बुद्धि या प्रतिज्ञा की आवश्यकता नहीं है। माते शैली के निबन्धों को 'पर्सनल एसे' कहा जाता था। हिन्दी में इसे व्यक्तिगत निबन्ध, व्यक्तिव्यंजक निबन्ध, ललित निबन्ध आदि नाम दिये गये हैं। प्रीस्टले के अनुसार निबन्ध मौलिक व्यक्तित्व की निश्छल अभिव्यक्ति और कलात्मक वार्ता है।

हिन्दी साहित्य के प्रतिष्ठि विद्वानों ने भी निबन्ध को प्रत्येक दृष्टिकोण से देखने का सफल प्रयास किया है। बाबू गुलाब राय के अनुसार, ''निबन्ध ऐसी गद्य रचना है जिसमें एक निश्चित आकार के मध्य किसी विषय का वर्णन या उल्लेख नितान्त स्वच्छन्दता, सजीवता एवं निजीपन के साथ किया गया हो।'' डॉ श्याम सुन्दर दास का मत है कि गहन विषय का पाण्डित्यपूर्ण सविस्तार उल्लेख ही निबन्ध कहलाता है जबकि आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने निबन्ध को गद्य की कसौटी के रूप में स्वीकार करते हुए कहा है-''एक-एक पैराग्राफ में विचार दबा-दबाकर ठूँसे गए हों और एक-एक वाक्य किसी सम्बद्ध विचार खण्ड के लिए हो।''

प्रो. जयनाथ 'नलिन' के अनुसार, ''निबन्ध गद्य काव्य की वह मर्यादित विधा है, जिसमें लेखक के स्वाधीन चिंतन और निश्चल अनुभूतियों की सरस सजीव अभिव्यक्ति होती है।'' डॉ. सूर्यकान्त शास्त्री का विचार है-'निबन्ध एक प्रकार का स्वगत भाषण है।'

निबन्ध के विस्तृत फलक को समेटते हुए डॉ. बलवंत लक्ष्मण कोतमिरे ने अपना मत व्यक्त किया है कि ''निबन्ध एक साहित्यिक और ललित गद्य रचना है, जिसमें लेखक किसी विचार या विषय से प्रभावित होकर अपनी भाषा में अपने भावों या विचारों की क्रिया तथा प्रतिक्रिया को ऐसे सजीव ढंग से व्यक्त करता हुआ पाठक की मनोवृत्तियों को सचेत करता है कि वह कुछ काल के लिए प्रभावित होता रहे या विचार करता रहे।''

हिन्दी साहित्य के अन्य विद्वानों में पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी, निबंध में, 'व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति' की अनिवार्यता की बात करते हैं तो डॉ. विजय शंकर मल्ल के अनुसार, 'मस्तिष्क के दुबके हुए किसी भाव या विचार की अभिव्यक्ति का प्रयास ही निबन्ध है।' निबन्ध व उसकी प्रकृति पर प्रकाश डालते हुए लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय का विचार है-''निबन्धकार किसी मनोनीत विषय को अपने व्यक्तित्व के रस से पगाकर प्रकट करता है। वह विषय का अध्ययन करके नहीं लिखता, वह पाठक के साथ आत्मीयता स्थापित करता है।''

निष्कर्षत: निबन्ध से तात्पर्य ऐसी गद्य रचना से है जो किसी भी शैली, विषय (सामाजिक, आर्थिक, बौद्धिक, धार्मिक एवं दार्शनिक) पर आत्मीय सूत्र सहित लिखी गई हो।

निबन्ध विधा-उद्भव एवं विकास

कहानी, उपन्यास, नाटक, एकांकी एवं आलोचना आदि गद्य विधा की भाँति निबन्ध भी एक सशक्त गद्य विधा है। इससे पूर्व कि निबन्धकारों के साहित्यिक अवदान की विस्तृत चर्चा हो, 'निबन्ध क्या है? मूल उत्पत्ति स्थल एवं हिन्दी साहित्य में निबन्ध का आविर्भाव कब हुआ', आदि पर विचार करना समीचीन प्रतीत होता है।

'निबन्ध' शब्द अंग्रेजी भाषा के 'एसे' शब्द का पर्यायवाची है। अंग्रेजी का ''ESSAY' शब्द मूलत: लैटिन शब्द ''EXGIUM'' से व्युत्पन्न है- जिसका शाब्दिक अर्थ 'तौलना' है। 'एस्साऐ (Essai)' शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग 'मोंतेन' ने अपनी टिप्पणियों के लिये प्रयुक्त किया था जो यद्यपि 'प्रयास' के शाब्दिक अर्थ में व्यवहृत हुआ। किन्तु इसमें स्वाभाविक रूप से अवैज्ञानिकता, अव्यवस्था, अपूर्ण अक्रमता समाहित थी। बेकन ने अपनी रचनाओं में ''ESSAY'' को इसके मूल रूप एवं संदर्भ में स्वीकार किया जिसमें क्रमबद्ध एवं व्यवस्थिति चिन्तन था। लेकिन कुछ विद्वान फ्रांसीसी लेखक मोंतेन को आधुनिक निबन्ध का प्रणेता मानते हैं, जिसने स्वयं को निबन्ध का विषय बनाकर निबन्ध लिखे। उसका मत था 'I Speak unto paper as unto the first man.'। 'मोंतेने के निबन्ध सन् 1580 ई. में प्रकाशित हुए जिनका अंग्रेजी अनुवाद सन् 1593 में प्रकाशित हुआ । सम्भवत: अंग्रेजी भाषा में अनुवादित इंग्लैण्ड में प्रकाशित प्रथम निबन्ध संग्रह

*** अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, एस.एस.जी पारीक स्नातकोत्तर महाविद्यालय, जयपुर (राज.)**

था। सन् 1612 ई. में बेकन द्वारा लिखित निबन्ध संग्रह प्रकाशित हुआ जो 'अरिस्टॉटिल, सिसरो एवं प्लेटो' आदि के मूल चिंतन, एवं तर्कों पर आधारित था। आज भी अंग्रेजी साहित्य 'बेकन' को निबन्ध का प्रणेता मानती है। बेकन की सबसे महत्त्वपूर्ण विशेषता उसकी परिमार्जित एवं परिष्कृत भाषा, सूक्तियों से परिपूर्ण वाक्य, गूढ़, गम्भीर एवं वस्तुनिष्ठ विचार हैं।

अंग्रेजी साहित्य में आगे के निबन्धकारों में ''मैथ्यू आर्नल्ड, मैकाले, रस्किन, कार्लाइल, थैकरे, अब्राहम काउली, ले हंट, डी क्विन्सी, गोल्ड स्मिथ एवं चार्ल्स लैम्ब आदि प्रतिष्ठित निबन्धकार हैं जिन्होंने इस विधा को नवीन किन्तु समीक्षात्मक एवं ऐतिहासिक आयाम प्रदान किये।''

हिन्दी में निबन्ध साहित्य-हिन्दी निबन्ध के जन्मदाता के रूप में श्री बनारसीदास जैन को माना जा सकता है क्योंकि इन्होंने सन् 1670 में ब्रजभाषा में 'उपादान निमित्त की चिट्ठी' एवं 'परमार्थ वचनिका' आदि निबन्ध लिखे थे। इसके बाद श्रद्धाराम फिल्लौरी, दयानन्द सरस्वती एवं राजा शिव प्रसाद सितारे-हिन्द आदि लेखकों ने ब्रज एवं खड़ी बोली में इस विधा को जीवित रखा।

हिन्दी के प्रथम मौलिक अथवा व्यक्ति व्यंजक निबन्ध (पर्सनल एसे) के रूप में राजा शिवप्रसाद सितारे-हिन्द द्वारा रचित निबन्ध 'राजा भोज का सपना' (1839 ई.) को माना जा सकता है किन्तु निबन्ध के सूत्रधार भारतेन्दु हरिश्चन्द्र एवं उसके सहयोगी रचनाकार ही हैं। मुद्रण-प्रकाशन की व्यवस्था ने भी निबन्ध के प्रसार में सकारात्मक सहयोग प्रदान किया है जिसके फलस्वरूप भारतेन्दुकालीन पत्रिकाओं यथा-'कवि वचन सुधा, हरिश्चन्द्र चन्द्रिका, हिन्दी प्रदीप, ब्राह्मण एवं आनन्द कादम्बिनी आदि में धर्म, संस्कृति, राजनीति, साहित्य, ज्ञान-विज्ञान, समाज, यात्रा से सम्बन्धित विषयों पर निबन्ध प्रकाशित होने लगे। भारतेन्दुयुगीन प्रमुख निबन्धकारों में-बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन', काशीनाथ खत्री, लालाश्रीनिवासदास, राधाचरण गोस्वामी, ज्वालाप्रसाद तोताराम, पं. अम्बिकादत्त व्यास, बाल मुकुन्द गुप्त आदि थे जिनमें पं. बालकृष्ण भट्ट एवं पं. प्रताप नारायण मिश्र आदि निबन्धकार श्रेष्ठ एवं सजग थे इसीलिए आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने इन्हें क्रमश: हिन्दी का 'स्टील' एवं 'एडीसन' कहा है।

इसके बाद का समय हिन्दी निबन्ध के इतिहास में 'द्विवेदी काल' से संज्ञित है। द्विवेदी काल में निबन्ध की भाषा में परिमार्जन और शब्द समृद्धि की तरफ विशेष ध्यान दिया गया। सन् 1903 में पण्डित महावीर प्रसाद द्विवेदी 'सरस्वती पत्रिका' के सम्पादक बने। उन्होंने निबन्ध के लिए उच्च आदर्शपरक शुद्ध व्याकरण सम्मत भाषा के साथ साहित्य के संस्कार की बात कही जिसके कारण भारतेन्दुकालीन निबन्धों जैसी अद्भुतता व जिंदादिली नदारद हो गई। खैर!

द्विवेदी काल में निबन्ध का चहुँमुखी विकास हुआ जिसे संक्षेप में इस प्रकार देखा जा सकता है-

1. चिन्तनात्मक निबन्ध- (अ) भावात्मक निबन्ध (ब) विचारात्मक निबन्ध (स) उभयात्मक निबन्ध

2. कथात्मक निबन्ध- (अ) कहानी शैली में रचित निबन्ध (ब) स्वप्न शैली में रचित निबन्ध (स) आत्मकथा शैली में रचित निबन्ध पत्र शैली में रचित निबन्ध

3. वर्णनात्मक- पत्र शैली में रचित निबन्ध

विभिन्न विषयों पर विभिन्न शैली में लिखित मौलिक निबन्धों के अलावा द्विवेदी काल में निबन्ध साहित्य का विपुल मात्रा में अनुवाद भी हुआ है।

इस युग के निम्न निबन्धकारों के नाम आदरपूर्वक लिये जा सकते हैं-केशव प्रसाद सिंह, वेंकटेशनारायण तिवारी, लल्लू प्रसाद पाण्डेय, माधव मिश्र, सरदार पूर्णसिंह, पद्म सिंह शर्मा, गणेश शंकर विद्यार्थी, रमाशंकर शुक्ल, मिश्रबन्धु, चन्द्रधर शर्मा गुलेरी, वियोगी हरि, महावीर प्रसार द्विवेदी, गोविन्दनारायण मिश्र, गोपालराम गहमरी, ब्रजनन्दन सहाय, गंगा प्रसाद अग्निहोत्री और बाबू गुलाबराय आदि।

सन् 1920-40 ई. तक के काल को निबन्ध के इतिहास में 'शुक्ल युग' के नाम से जाना जाता है। या यों कहें कि निबन्ध के विकास का तीसरा पड़ाव 'शुक्ल युग' है तो उचित ही होगा। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल नवीन हिन्दी निबन्ध के युग प्रवर्तक हैं। इन्होंने 'चिन्तामणि' एवं 'विचार-वीथी' के माध्यम से साहित्यिक, मनोवैज्ञानिक एवं सैद्धान्तिक निबन्धों की रचना की है। उनके निबन्धों में प्रौढ़ता है, कहीं भी छिछलापन या शुष्कता नहीं आ सकी है। इस काल के मुख्य निबन्धकारों में-'चतुरसेन शास्त्री, माखनलाल चतुर्वेदी, रामकृष्ण दास, सियारामशरण गुप्त, बाबू गुलाबराय, जयशंकर प्रसाद, पंत, निराला, आचार्य नन्द दुलारे वाजपेयी, पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी , महापंडित राहुल सांकृत्यायन, वियोगी हरि, जैनेन्द्र, नगेन्द्र, इलाचन्द्र जोशी, सत्येन्द्र, हरिभाऊ उपाध्या, पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र', कामता प्रसाद गुरु आदि।

ललित निबन्ध-उपर्युक्त विवरण केवल इस दृष्टि से प्रस्तुत किया गया है कि विश्व साहित्य में निबन्ध विधा के उद्भव और विकास की पृष्ठभूमि ज्ञात हो सके। 'पर्सनल एसे' जिसे हिन्दी में 'ललित निबन्ध' के नाम से जाना जाता है। उपर्युक्त वर्गीकरण में भावात्मक निबन्ध की कोटि में रखा गया है। सही अर्थों में इस विधा का विकास हिन्दी में 'शुक्ल युग' में हुआ यह कहना अनुचित नहीं होगा। शुक्ल जी ने तो विचारात्मक निबन्ध अधिक लिखे किन्तु उनके युग के अन्य निबन्धकार ललित निबन्ध की परिभाषा को स्पर्श करने वाले निबन्ध अच्छी मात्रा में लिखने लगे। इस विधा के लेखकों में शुक्ल के पश्चात् इस काल के दूसरे प्रतिष्ठित एवं प्रखर निबन्धकार आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी थे। मूलत: ललित निबन्ध के प्रणेता आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ही हैं। उनके ललित निबन्धों की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि में उत्कट जिजीविषा, नवीन जीवन बोध, सामाजिक विखंडन के मध्य श्रेष्ठ एवं साहसिक पथ की चाहत हर तरफ दृष्टिगोचर होती है। द्विवेदी जी ने संस्कृति की गत्यात्मकता में नवीनता मिश्रित करके विगत को छोड़ने का प्रयास किया है जिसके कारण उनके ललित निबन्धों में एक तीक्ष्ण धार उत्पन्न हो गई है जो पाठक के अन्त:करण तक प्रवेश कर जाती है।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के ललित निबन्धों में सामूहिकता, इहलौकिकता, व्यैक्तिकता एवं जिजीविषा मूल धर्म के रूप में परिलक्षित हुई है, जिसका कारण संघर्ष है। परिणामस्वरूप जीवनोन्मुखता और भी प्रखर हो उठी है। विशेषत: 'अशोक के फूल, बसंत आ गया, शिरीष का फूल, आलोक पर्व, विचार प्रवाह, विचार और वितर्क एवं कुटज' आदि इनके श्रेष्ठ ललित निबन्ध संग्रह हैं जिनकी रचना प्रक्रिया में सहजता एवं पण्डित्य का खिंचाव, गुंफित पद रचना, लयात्मक भाषा, वस्तुओं का बिम्बात्मक चित्रण आदि इस भाँति रच-बस गए हैं कि निबन्धों को व्यापक स्थाई धरातल मिल गया है। ललित निबन्धों के अलावा आचार्य द्विवेदी ने समीक्षात्मक एवं शोधपरक निबन्धों की भी रचना की है।

विद्वानों ने ऐसे निबन्धों को ललित निबन्ध की संज्ञा दी है जिनमें

मानव, प्रकृति से सम्बन्धित भिन्न-भिन्न विषय, व्यक्तिगत चिंतन एवं स्वतन्त्र संवेदनाओं, अनुभूतियों को रोचक एवं ललित शैली में उल्लेखित किया गया हो। उपर्युक्त समस्त गुणों- विशेषताओं के कारण निबन्ध में एक विशेष प्रकार का आकर्षण एवं लालित्य उत्पन्न हो जाने के कारण ही ललित निबन्ध कहलाता है।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के पश्चात् बहुत से अन्य लब्ध प्रतिष्ठि लेखकों ने श्रेष्ठ ललित निबन्धों की रचना की है, जिनमें- 'कन्हैया लाल मिश्र प्रभाकर' (जिन्दगी मुस्कराई, शंख बजे, दीप जले, जिंदगी लहलाई), रामनारायण उपाध्याय (जनम-जनम के फेर), रामदरश मिश्र (कितने बजे हैं), डॉ. विजयेन्द्र स्नातक (अनुभूति के क्षण), विवेकीराम (नया गाँव नामा), रतन लाल शर्मा (छोटी-छोटी बातें), डॉ. श्याम सुन्दर दास (सौन्दर्य और साँप), डॉ. शिवप्रसाद सिंह (शिखरों का सेतु), डॉ. धर्मवीर भारती (ठेले पर हिमालय, पश्यन्ती), रामवृक्ष बेनीपुरी (गेहूँ बनाम गुलाब), देवेन्द्र सत्यार्थी (धरती गाती है, एक युग एक प्रतीक, रेखायें बोल उठीं), यशपाल (चक्कर क्लब, बात-बात में बात, गाँधीवाद की शव परीक्षा, देखा-सोचा-समझा), सियारामशरण गुप्त (झूठ सच), जयशंकर प्रसाद (काव्य, कला और अन्य निबन्ध), निराला (प्रबन्ध पद्म, प्रबन्ध प्रतीक्षा, चाबुक), धीरेन्द्र वर्मा (विचारधारा), पदुम लाल पुन्नालाल बख्शी (पंच पात्र, मकरन्द बिन्दु, प्रबन्ध परिजात, त्रिवेणी, कुछ और कुछ), वासुदेवशण अग्रवाल (कला और संस्कृति, पृथ्वीपुत्र) आदि प्रमुख हैं।

ललित निबन्ध एक सशक्त व गरिष्ठ विधा है। चूँकि ललित निबन्धों में ज्ञान, विद्वता, लेखन कौशल के साथ भाव प्रवणता एवं कल्पनाशीलता पर्याप्त मात्रा में होती है इसलिए प्रत्येक निबन्ध लेखक-ललित निबन्ध लेखक हो, आवश्यक नहीं है क्योंकि इसके लिए उसका उपर्युक्त गुणों से परिपूर्ण होना अति अवश्य है। अन्य, ललित निबन्ध की महती सेवा करने वाले एवं ललित निबन्धों को एक नवीन क्षितिज, उचित दिशा एवं विशिष्ट मार्ग प्रशस्त करने वालों में डॉ. विद्यानिवास मिश्र, प्रभाकर माचवे, डॉ. शिवप्रसाद सिंह, ठाकुर प्रसाद सिंह एवं कुबेरनाथ राय (मराल, प्रियानील कण्ठी, रस आखेटक, गन्धमादन, निषाद-बासुरी, पर्णमुकुट, विषाद योग, दृष्टि अभिसार) के नाम अग्रणीय हैं। इन्होंने इस विधा पर उल्लेखनीय कार्य किया है।

विशेषत: कुबेरनाथ राय की ललित निबन्ध धारा गंगाजल की भाँति पावन व श्रद्धेय है। भारतीय संस्कृति को उल्लेखित एवं संचित करने का श्रेय कुबेर नाथ राय को ही जाता है।

कुबेर नाथ राय के निबन्धों में भारतीयता की अवधारणा-

हिन्दी साहित्य में कुबेरनाथ राय ललित निबन्धकार के रूप में जाने जाते है उनके निबन्धों में शुद्ध भारतीय आत्मा का स्पन्दन दिखाई देता है। अत: इनके लगभग समस्त निबन्धों में भारतीयता के समस्त पक्षों का परिचय प्राप्त होता है। संस्कृति शब्द का निर्माण सम उपसर्ग के साथ संस्कृत की ड,कृ, ञ,धातु से बनता है। जिसका शाब्दिक अर्थ है परिष्कृत करना। इस शब्द के विष्य में जब हम वृहत हिन्दी कोश में देखते है तो इस शब्द को स्त्री लिंग संज्ञा के रूप में माना गया है। लेकिन जब हम इसकी परिभाषा को देखते हैं जो यह दो रूपों में व्यहत हुआ दिखाई देता है, एक नर विज्ञान से जोड़ते हुए सामाजिक परम्परा द्वारा ग्रहण की गई शिक्षा के कारण समस्त व्यवहारिक ज्ञान के रूप में माना गया है। संस्कृति के सम्बन्ध में रामधारी सिंह दिनकर की पुस्तक संस्कृति के चार अध्याय की भूमिका में पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने लिखा है। कि एक बड़े लेखक का कहना है कि संसार भर में जो भी सर्वोत्तम बातें जानी या कहीं गई हैं उनसे अपने आप को परिचित करना संस्कृति है।[1] संस्कृति के विषय में प्रसिद्ध उपन्यासकार प्रेमचन्द कहते हैं कि मानव को समझने की प्रक्रियाओं एवं उसके साधनों को संस्कृति कहते हैं। [2] महादेवी वर्मा की मान्यता है कि संस्कृति जीवन के बाह्य और आन्तरिक संस्कारों का क्रम है इस दृष्टि से उसे जीवन को सर्व और से स्पर्श करना ही होगा।[3]

डॉ कृष्ण देव शर्मा कहते हैं कि संस्कृति शब्द का अर्थ किसी भी समाज के जीवन का व्यापक धर्म, जिसमें उसके सभी पहलू आ जाते हैं। किसी समाज के जीवन के सारे धर्मो की गुणों एवं अवगंणों की समष्टि का नाम संस्कृति है। शारीरिक या मानसिक शक्तियों का प्रशिक्षण, दृढिकरण या विकास अथवा उससे उत्पन्न व्यवस्था है। [5] संस्कृति का हमारे जीवन पर प्रत्यक्ष और परोक्ष दोनों रूपों में प्रभाव पड़ता है। जन्म से मृत्यु तक हमारे जीवन को प्रभावित करने वाली संस्कृति जिसमें सोलह संस्कार शिक्षा-दीक्षा, रीति-रिवाज, पधिान व वेशभूषा,सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक, पारिवारिक मान्यताएँ आदि इसके अन्तर्गत आते हैं। ये सारे घटक हमारे जीवन को प्रभावित करते हैं। जनके कारण हमारे व्यक्तित्व का निर्माण और विकाश होता है वैदिक काल से आज तक जो कुछ मानवीय परम्पराएँ स्थानान्तरित हो रही हैं। संस्कृति का ही प्रतिरूप हैं या यों कहे की जब परम्पराएँ मुल्य परक स्थायित्व और दिव्य गुणों से परिपूर्ण हो जाती है। तो वे संस्कृति की श्रेणी में आ जाते हैं एवं जहाँ कही इनमें कोई त्रुटी का अभाव उत्पन्न होजाता हैतो ये सभ्यता के रूप में स्वयं को प्रस्तुत करती है। संस्कृति मानव जीवन के सर्वांगीण विकाष से सम्बद्ध हैं जिसमें अध्यात्म, दर्शन, धर्म, प्रकृति एवं मानव जीवन से सम्बन्धित विविध घटक समाहित होते है। अथवा यो कहाँ जा सकता है कि संस्कृति व्यक्ति के इस लोक और शाश्वत जीवन के स्वरूप से प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में जुड़ी हुई है। वास्तव में संस्कृति मानव और मानव समाज के एक आलोक के रूप में कार्य करती है जिसके कारण हमारी आन्तरिक गरिमा, आचरण,आदि में अपेक्षित सुधार आता है सीधे और सरल शब्दो में यह कहाँ जा सकता है कि मानव जीवन में प्रसन्नता, खुशी, मधुरता स्मृद्धि, सुख एवं मधुरता भर देने का नाम ही संस्कृति है। संस्कृति और प्रकृति का अभिन्न सम्बन्ध है यही कारण है कि वैदिक काल से प्रकृति का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण रहा है एवं प्रकृति के अभाव के बिना सृष्टि की कल्पना सम्भव ही नहीं। वेदों को भारतीय संस्कृति का उद्‌गम स्त्रोत माना जाता है जो लोक और परलोक के विषय में विस्तृत चर्चा करते हैं। यही कारण है कि संस्कृति हमें मृत्यु से अमृत की और ले जाती है, असत्य से सत्य की और ले जाती है, सामान्य से विशिष्ट की ओर ले जाती है, क्योंकि संस्कृति हमें भय निद्रा मैथुन एवं आहार आदि से मुक्त कराती है।

कुबेरनाथ राय की ललित निबन्ध यात्रा का एक लम्बा और सुखद इतिहास दिखाई देता है। वे एक ऐसे ललित निबन्धकार हैं जो ऊपर पुरातन, संस्कारगत, परम्परावादी भारतीय सभ्यता और संस्कृति की जड़ों से लिपटे हुए हैं वहीं उनके विचारों में पूर्णत: आधुनिकता का बोध होता है। इस सम्बन्ध में रघुवीर सहाय दिनमान पत्रिका में लिखते हैं यदि संस्कार परम्परासवादी होतो क्या दृष्टि आधुनिक हो सकती है? यानि आप अपने प्रचीन को आत्मसात्कर, पचाकर कुछ ऐसा कह सके, जो वर्तमान से इतना समानधर्मी लगे कि आप उसकी बाह थामकर भविष्य की ओर बढ़ सके- इस प्रश्न का जितना साफ उत्तर कुबेरनाथ राय के निबन्धों को पढ़कर प्राप्त होता है उतना हिन्दी में लिखी गई

किसी कृति को पढ़कर नही मिलता। इन निबन्धों को पढ़ना एक नया अनुभव पाना है। अत्यन्त सशक्त और चुम्बकीय शैली में लिखे कुबेरनाथ राय के इन निबन्धों को आप भी वैसे ही पढ़ें जैसे प्रिया नीलकण्ठी के निबन्ध बच्चन जी ने पढ़े और फिर उन्हीं के स्वर में आप भी कहें कि शायद ही किसी उपन्यास को इतनी रूचि से पढ़ा हो। निश्चय ही इन निबन्धों में शब्दों के द्वारा ऐसे महाकान्तार की रचना की गई है जिसके भीतर कुशुमति अर्थो की विविध सुगन्ध विद्यमान है। कुबेर नाथ राय ने श्रीमदभागवद गीता, रामायण, महाभारत, अभिज्ञान शाकुन्तलम, मेघदूत, आन्नद लहरी और गीत गोविन्द से लेकर निराला और रविन्द्रनाथ टैगोर के कार्यो से उद्धर्ण भारतीय रचनाकारों के अलावा उनकें निबन्धों में होमर से लेकर ऐजरा पाऊण्ड और एच.डी. लॉरेन्स तक के पाश्चात्य साहित्य के अंश भी उद्धर्त हैं।

वास्तव में कुबेरनाथ राय के साहित्य में भारतीय जीवन धारा संस्कृति से और संस्कृति जीवन धारा से मिली हुई दिखाई देती है अथवा यह कहॉं जा सकता है कि जीवन की अस्मिता को मानव मूल्यों के सन्दर्भ में उल्लेखित करने का प्रयास किया गया है जिसमें औपचारिक समस्याओं का निषेध है एवम् जीवन मूल्यों का अत्यन्त सहजता के साथ उल्लेख है। यही कारण है कि उनके निबन्धों में स्वस्थ जीवन दर्शन के चित्रण के लिए कल्पना शीलता ललित निबन्धों की आवश्यकता है कल्पना और संवेदना दोनों का वैचारिक बोध उनके निबन्धों को कलेवर दे देता है और अपनी सम्पूर्ण अनुभूति दृष्टि को समेटने में कवि होने से प्राय बच जाते हैं। उनके निबन्धों में इनकी अवलोकन एवं सर्वेक्षण शक्ति के भी दर्शन होते हैं। निबन्धकार मानों प्रत्यक्ष देखकर उसे अपने भावो मे ंसमेट लेता है गम्भीर विषय और विषम परितिस्थातियों को गहन चिन्तन के माध्यम से अत्यन्त सहजता के साथ उत्तर देने का प्रयास किया है।[7]

हिन्दी साहित्य के प्रमुख ललित निबन्धकारों में डॉ हजारी प्रसाद द्विवेदी, पण्डित विद्यानिवास मिश्र और कुबेरनाथ राय एक तिगड़ी के रूप में दिखाई देते हैं लेकिन कुबेरनाथ राय के निबन्धों में भारतीय शास्त्रों के साथ भारतीय लोक संस्कृति और परम्परा का आधुनिकतम रूप भी दिखाई देता है। कुबेरनाथ राय के निबन्धों में भारतीय संस्कृतिक-गरिमा का पूरी ईमानदारी के साथ निर्वहन हुआ है। भारत की प्रचीन संस्कृति में डॉ रामजी उपाध्याय लिखते है कि संस्कृति का मूल अर्थ है सुधारना। सुन्दर व पूर्ण बनाना। जब हम कुबेरनाथ राय के ललित निबन्ध संग्रह प्रिया नीलकण्ठी पर दृष्टिपात करते है तो इस पुस्तक में भारत की सनातन संस्कृति, सभ्यता के प्रति अटूट आस्था के दर्शन होते हैं जो मनुष्य के चारों और धर्म परम्परा सांस्कृति मूल्य आदि को उदघाटित करते हैं। कुबेर नाथ राय की विचार धारा में आधुनिकता की उपस्थिति कुण्ठा रहित अवस्था में दिखाई देती है। यही कारण है कि भारतीय सनातन मूल्यों को उनकी श्रेष्ठता के आधार पर उल्लेखित करने में सफल हुए है। वे जीवन मूल्यों एवं संस्कारों के साथ किसी ससभी स्तर पर समझौता करने के विरूद्ध है यही कारण है कि उनकी रचनाओं में वीर गाथा कालीन भावना का स्वत: ही एहसास होता है। कुबेर नाथ राय नास्तिक नहीं हैं अपितु उनकी आस्था-धर्म के प्रति पूर्णत:स्पष्ट और खुले में दिखाई देती है। वे हिन्दु देवी-देवताओं पर विश्वास करते हैं धर्म में आस्था रखते हैं और इन्हें मानव एवं राष्ट्रकल्याणकारी घटक के रूप में देखते हैं मानव की स्थिति भी कुबेरनाथ राय की दृष्टि में कदापि कम नहीं है वे मनुष्य को असाधारण प्राणी के रूप में देखते हैं क्योकि उनकी शक्ति, प्रतिभा और क्षमता मानव को साधारण से विशिष्ट प्राणी बनाती है। वे प्रत्येक उस अपूर्ण अथवा विकृत आधुनिकता का खण्डन करते हैं जो मूल्य विहिन व क्षणिक मूल्यों पर आधारित है, इसी कारण, वे आधुनिक युग को विशाद का युग कहने से नहीं हिचकिचाते यहाँ यह स्पष्ट किया जाना अपेक्षित है कि वे उन समस्त दमित वासनाओं की परिभाषाओं को एक सिरे से नकार देते हैं जो फ्रॉयड और ह्यमर द्वारा व्यक्त की गई थी।

कुबेरनाथ राय निसन्देह शुद्ध भारतीय ललित निबन्धकार के रूप में हमारे सामने आते है जिन्होंने भारतीय सांस्कृतिक सभ्यता, ग्रन्थों, परम्पराओं का पूरी श्रद्धा और विश्वास के साथ सम्मान किया है। साथ ही वे प्रकृति के प्रति भी अत्यन्त श्रद्धावान दिखाई देते हैं। कटुसत्य है कि प्रकृति के बिना जीवन कदापि पूर्ण नहीं हो सकता है वैदिक युग में भारतीय परम्परा में निसर्ग उपासना के अनेकों उदाहरण एवं प्रमाण प्राप्त हुए हैं जिनमें सूर्य, चन्द्र, वायु, उषा, जल, आदि की पूजा के विषय में जानकारी मिलती है। कारण, तत्कालीन ऋषि मुनि इन्हें एक अलौकिक शक्ति के रूप में देखते थे। मूल प्रश्न यह है कि प्रकृति का किसी न किसी रूप में सर्वोच्च स्थान रहा है। जो मानव जीवन के लिए शुभ फलदायी भी रहा है। यही कारण है कि वैदिक युगीन ग्रन्थों से लेकर आधुनिक कालीन पुस्तकों तक में प्रकृति अपना अस्तित्व निर्विवाद रूप से स्थापित किए हुए है। जहाँ तक कुबेर नाथ राय और प्रकृति के अन्त: विचारों का प्रश्न है तो यह कहाँ जा सकता है कि कुबेरनाथ राय निस्वार्थ, ईमानदार, प्रकृति प्रेमी और प्रकृति विषयक सफल रचनाकार का स्थान रखते हैं विशेषत इनकी कृति दृष्टि अभिसार एवं प्रिया नीकलण्ठी में प्रकृति से सम्बन्धित जो निबन्ध है वो अतयन्त स्मर्ध है। कुबेरनाथ राय कि प्रकृति से सम्बन्धित लेखन विशेषता यह है कि उन्होंने जड़ एवं चेतन दोनों प्रकार के उपादानों का संतुलित सुन्दर वर्णन किया है। इस विषय में इनकी निम्न पंक्तियाँ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। वे लिखिते हैं, बड़ी सावधानी दृष्टि से प्रकृति प्रेम के प्रति शहीद होने की मन: स्थिति में पग प्रति पग आगे बढ़ रहा था। इसी तरह कुबेरनाथ राय सूर्य को भारतीय संस्कृति का श्रेष्ठ प्रतीक मानते हैं। उनकी पुस्तक पर्ण मुकुट के दो निबन्ध सूर्य कवि है: सूर्य नायक है एवं सूर्य और अति सूर्य में इन्होंने सूर्य से सम्बन्धित अत्यन्त व्यापक और सष्टि विवेचन, विशलेषण प्रस्तुत किया है। वे सूर्य को प्रकृति का निर्माता जीवन का प्रेणता दिवस और ऋतुओं का नियामक मानते है। सूर्य का सम्मान अथवा महत्त्व समस्त संसार के मानव, पशुपक्षी एवं वनस्पति आदि के लिए महत्वपूर्ण है। विशेषत सूर्योदय अनेक दोषों का निवारक नवीन जीवन स्फूर्ति एवं आनन्द का प्रदाता और पावनता प्रदान कने वाला मुख्य घटक है। भारतीय और भारतीयता के समस्त पक्षों, पहलुओं को व्याख्यायित कर संरक्षित करने वाले कुबेरनाथ राय एक संग्रहालय के रूप में अमरत्व पद पा गये हैं।

सन्दर्भ-

1. रामधारी सिंह दिनकर-संस्कृति के चार अध्याय पृष्ठ सं. 11, 2. प्रेमचन्द-मानसरोवर भाग एक पृष्ठ सं.-5, 3.महादेवी वर्मा-मेरे प्रिय निबन्ध पृष्ठ सं-16, 4. डॉ. कृष्ण देव शर्मा-पाश्चात्य शास्त्र के सिद्धान्त पृष्ठ सं. 193, 5. रामधारी सिंह दिनकर-संस्कृति के चार अध्याय पृष्ठ सं. 11, 6. नरेश मेहता काव्य का वैष्णव व्यक्तित्व पृष्ठ सं. 12-13, 7. डॉ. चुन्नी लाल जायसवाल-कुबेर नाथ राय के निबन्धों में जीवन दर्शन पृष्ठ सं. 95, 8. कुबेरनाथ राय विषाद योग-पृष्ठ सं -29 9. हिन्दी साहित्य का इतिहास-डॉ. नगेन्द्र 10. हिन्दी निबन्धकार-जयनाथ नलिन।